१९९०: जिसने विश्व राजनीतिक जीवन की दिशा बदल दी

अंतर्राष्ट्रीय प्रेक्षकों ने वैसे तो पाकिस्तान के प्रधानमंत्री पद से श्रीमती बेनजीर भुट्टो का हटना १९९० (छह अगस्त) की सबसे बड़ी घटना माना है, लेकिन यह एशिया की सबसे बड़ी घटना हो सकती है विश्व की नहीं। हां, विश्व की एक बड़ी घटना तो है ही और इससे मिलती-जुलती कई घटनाएं हैं। यह वर्ष ऐसी-ऐसी महत्वपूर्ण विविध घटनाओं का वर्ष रहा जिन्होंने द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से चली आ रही अंतर्राष्ट्रीय जीवन की दिशा में नया मोड़ ला दिया और शीतयुद्ध प्रतिस्पर्द्धा, हथियारों की होड़ और एक दूसरे के खिलाफ कूटनीतिक चालें चलते रहने की संकुचित दुनिया से हटाकर एक ऐसे मुक्त और व्यापक माहौल में ले आया है जहां सब आपस में मैत्री तथा सद्भावना के नये-नये प्रतिमान ढूंढ़ रहे हैं।

पूरे ४५ वर्ष के बाद जर्मनी का एक होना, ११ वर्षों के शासनकाल के बाद स्वयं को अलोकप्रिय महसूस कर ब्रिटिश प्रधानमंत्री श्रीमती मारग्रेट थैचर का अपने पद से इस्तीफा देना, इराक के तानाशाह सद्दाम हुसैन का कुवैत पर कब्जा जमाकर अमरीका को खुली चुनौती देना, जनतांत्रिक आन्दोलन के दबाव के आगे बांग्लादेश के सैनिक राष्ट्रपति ले. जनरल हुसैन मुहम्मद इरशाद का अपने पद से हटना और नेपाल नरेश का झुकना- ये सारी ही अपने-आप में महत्वपूर्ण घटनाएं हैं।

लेकिन कूटनीतिक विश्लेषकों ने १९९० की सबसे महत्वपूर्ण घटना माना है जर्मन एकीकरण को, क्योंकि यूरोपीय एकीकरण की प्रक्रिया उसी की अगली कड़ी है जिसने शीतयुद्ध की समाप्ति के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय मंच पर बुनियादी परिवर्तन ला दिये।

जर्मन एकीकरण की पृष्ठभूमि वास्तव में १९८९ के उत्तरार्द्ध में तैयार हुई, जब दमन की प्रतीक १९४५ में बनी बर्लिन की लौह दीवार टूटी और पूर्वी जर्मनी के हजारों-हजार लोग बेतहाशा भाग-भागकर पश्चिम जर्मनी पहुंचे तथा खुद को खुली हवा में महसूस किया। दोनों जर्मनी के एक होने का वह पहला संकेत था जिसे पश्चिम जर्मनी के चांसलर हेल्मुट कोल ने बखूबी समझा और पूरे जोर-शोर से अपने अभियान में जुट गये।

जर्मनी को एक करना कोई सहज काम नहीं था, क्योंकि द्वितीय विश्वयुद्ध के विजेताओं (ब्रिटेन, फ्रांस, अमरीका और सोवियत संघ) ने कोई कच्ची गोलियां नहीं खेली थीं। इन चारों विजेता देशों ने युद्ध के लिए जर्मनी को दोषी ठहराया और न केवल उससे युद्ध का हर्जाना वसूल किया बल्कि उसके टुकड़े-टुकड़े करके इस तरह से बंदरबांट कर लिये ताकि भविष्य में कभी यह देश एक न होने पाये।

१९१७ की बोल्शेविक क्रांति के बाद सोवियत संघ में समाजवादी व्यवस्था कायम हो गयी जिसे पश्चिमी देशों ने पसंद नहीं किया और उसे बिल्कुल अलग-थलग करने के लिए आपस में एक गुट बना लिया। हिटलर से डर सबको था, इसलिए उसके जमाने के जर्मनी को फाड़ने के लिए सोवियत संघ ने भी पश्चिमी देशों का साथ दिया, लेकिन १९४५ (जब हिटलर हारा और द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त हुआ) के बाद पूरा यूरोप दो खेमे में बंट गया। सोवियत संघ के नेतृत्व में बने पूर्वी यूरोप के समाजवादी खेमे ने पश्चिम यूरोप को पूंजीवादी और साम्राज्यवादी कहा। उसी हिसाब से जर्मनी का पूर्वी यूरोपीय हिस्सा समाजवादी खेमे में और पश्चिम यूरोप की ओर पड़ने वाला भाग पश्चिमी खेमे में आ गया। उसी समय से इन दोनों खेमों ने एक दूसरे को पीछे करने की प्रतिस्पर्द्धा में विध्वंसक हथियार बनाने की बाजी लगा दी जो शीतयुद्ध की शुरूआत है।

इन दोनों खेमों में और किसी मामले में आपस में सहमति नहीं थी लेकिन जर्मनी को एक न होने देने के मुद्दे पर दोनों पक्ष सहमत थे। इसलिए एकीकृत जर्मनी की सार्वभौमिकता से संबद्ध तथाकथित स्वाधिकार विजेता देशों ने अपने पास सुरक्षित रखा था ताकि भविष्य में कभी भी अगर एकीकरण का प्रयास कोई करे तो ब्रिटेन, फ्रांस, अमरीका और सोवियत संघ की स्वीकृति के बिना यह कतई संभव नहीं हो।

पूर्वी यूरोप में समाजवादी व्यवस्था के खिलाफ वर्षों से चले आ रहे आक्रोश का ज्वालामुखी की ओर झुकना हेल्मुट कोल के लिए बरदान साबित हुआ। उन्होंने न केवल पूर्वी जर्मनी को बल्कि सोवियत संघ को भी अपनी जर्जर अर्थव्यवस्था सुधारने के लिए दिल खोलकर मदद की। दोनों जर्मनी की जनता उनके साथ थी ही, इसलिए श्री कोल ने बड़े उत्साह से अपना काम किया। सोवियत संघ तो वैसे खुलकर विरोध करने की स्थिति में था नहीं तब भी उसने इतना अवश्य कहा कि दोनों जर्मनी के एक होने मे कोई हर्ज नहीं है, बशर्ते कि नैये (पश्चिमी देशों का सैन्य संगठन, जिसके खिलाफ समाजवादी देशों ने वार्सा संधि बनाया था) का सदस्य न बनकर तटस्थ रहे। सोवियत संघ का इशारा यूरोपीय शक्ति संतुलन की ओर था, जिसके बिगड़ने से उसकी सुरक्षा खतरे में पड़ सकती थी लेकिन अंदर से संशंकित पश्चिम के देश भी थे, तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती मारग्रेट थैचर ने तो विरोध किया ही, लेकिन माहौल देखकर सबों ने हामी भर दी और सितम्बर के अंत तक एकीकरण की सारी प्रक्रिया पूरी कर ली गयी। आज जर्मनी के पूर्वी हिस्से के सारे बंद पड़े कारखाने पश्चिम जर्मनी की सहायता से चल रहे हैं और श्री हेल्मुट कोल का भी एकीकृत जर्मनी का प्रथम चांसलर बनने का वर्षों का सपना पूरा हुआ।

और इसके ठीक दो महीने बाद (१९, २० और २१ नवम्बर) वह ऐतिहासिक क्षण भी आ गया जब समूचा यूरोप एक ही मंच पर साथ-साथ बैठकर परस्पर सहयोग और मैत्री के सूत्र में बंधने को तैयार हो गया जो परस्पर विरोधी खेमे को हथियारों की होड़ की दुनिया से बिल्कुल परे एक दूसरे की सुरक्षा तथा अन्य समस्याओं की ओर सोचने को विवश कर देता है।

पेरिस में संपन्न इस ऐतिहासिक सम्मेलन में पूरे यूरोप के ३७ देशों ने भाग लिया। सम्मेलन की समाप्ति के बाद जारी विज्ञप्ति को 'चार्टर ऑफ पेरिस' की संज्ञा दी गयी जो शीतयुद्ध की समाप्ति का प्रतीक है। समाजवादी देश तो अपने सैन्य संगठन वार्सा संधि को पहले से ही अप्रासांगिक महसूस कर रहे थे, क्योंकि उन्हें अपनी चरमरायी अर्थव्यवस्था ठीक करने के लिए पश्चिम के आगे झोली फैलानी पड़ी तो फिर उससे प्रतिस्पर्द्धा की क्या बात, लेकिन वार्सा संधि के खत्म होने की घोषणा विधिवत् उसी सम्मेलन में हुई।

इसके जवाब में नाटो देशों ने भी काफी उदारता क परिचय दिया जब बेल्जियम के सेनाध्यक्ष और नाटो सेक्रेटरी जनरल आलफ्रेड बोर्नर ने कहा कि यह संगठन अब सैन्य क्षमता का प्रतीक नहीं होगा, बल्कि इसका स्वरूप राजनीतिक हो जायेगा जिसका उद्देश्य यूरोप के किसी भी देश को हर प्रकार की सहायता करना होगा। हथियारों में कटौती करने पर आम सहमति हो गयी और यह भी सर्वसम्मति से तय हुआ कि अब सिर्फ उतने ही हथियार रखे जायें जितने अपनी सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं तथा सामूहिक सुरक्षा पर बल दिया गया। सम्मेलन में तैयार दस्तावेज (चार्टर ऑफ पेरिस, जिस पर सबसे पहले फ्रांस के राष्ट्रपति फ्रांस्वा मितरां और अमरीकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने हस्ताक्षर किये) की महत्ता इसी बात से जाहिर है कि अमरीका सोवियत संघ को आर्थिक व अन्य मदद दे रहा है जो दोनों देश शीतयुद्ध के दो छोर थे। यह एक नये युग की शुरूआत है।

छह अगस्त को राष्ट्रपति गुलाम इसहाक खां ने प्रधानमंत्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो की २० माह पुरानी सरकार को भ्रष्टाचार के आरोप में बर्खास्त कर दिया। जिस देश में एक बार सेना को अगर सत्ता का चस्का लग गया तो वहां फिर जन का प्रतिनिधियों की सरकार कायम होने की गुंजाइश कम ही रह पाती है। बर्मा उसका प्रत्यक्ष उदाहरण है, जहां चुनाव (मई, १९९०) में राजनीतिक पार्टियों की विजय के बावजूद सेना ने अपना कब्जा जमा रखा है।

पाकिस्तान में कोई आज से नहीं, बांग्लादेश की लड़ाई (१९७१) के समय से ही अप्रत्यक्ष रूप से सेना सरकार पर हावी रही है, लेकिन जिया-उल-हक के आने के बाद देश पूरी तरह सेना के कब्जे में चला गया और जनरल जिया के इंतकाल (नवम्बर, १९८८) के बाद भी वही होता आ रहा है जो सेना चाहती है। अब यह भी प्रमाणित हो चुका है कि जनरल जिया का विमान दुर्घटनाग्रस्त होना और श्रीमती बेनजीर भुट्टो का सत्ता में आना सेना का सुनियोजित षड्यंत्र था। दूरदर्शी गुलाम इसहाक खां अच्छी तरह जानते हैं कि सेना से बिगाड़ मोल लेकर राष्ट्रपति बने रहना संभव नहीं है, इसलिए उन्होंने सेनाध्यक्ष मिर्जा असलम बेग से तालमेल बिठाये रखा और जनरल बेग को जब यह पक्का महसूस हो गया कि श्रीमती बेनजीर इन्हें दरकिनार करना चाह रही हैं, राष्ट्रपति को इशारा कर दिया। चुनाव भी सेना की देखरेख में होने थे, (२४ अक्तूबर) क्योंकि बेनजीर को दुबारा सत्ता में न आने देना था और अब उनके पति आसिफ अली जरदारी के खिलाफ जालसाजी के मुकदमे चल रहे हैं।

नेपाल में पिछले दो वर्ष से चल रहे जनतांत्रिक आन्दोलन ने इस वर्ष आखिर रंग दिखाया और नरेश वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह देव को लोकेन्द्र बहादुर चंद के नेतृत्व वाली पंचायत सरकार को बर्खास्त करके नेपाली कांग्रेस और अन्य वामपंथी पार्टियों को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करना पड़ा जिन्हें आन्दोलन को निर्णायक मोड़ पर लाने का श्रेय है। मई में पहली बार नेपाल में राजनीतिक दलों को सरकार बनी और नौ नवम्बर को लागू नये संविधान ने नेपाल नरेश के बहुत सारे एकमुश्त अधिकार कम कर दिये। अब मार्च-अप्रैल में चुनाव होने जा रहा है जो दलविहीन पंचायत व्यवस्था खत्म होने के बाद का पहला आम चुनाव होगा।

सोवियत संघ में चल रही राजनीतिक और आर्थिक उथल-पुथल इस वर्ष का बहुचर्चित मामला है। सोवियत राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचेव को 'पेरेस्त्रोइका' ने एक ओर जहां सोवियत संघ में और समाजवाद के नाम पर निरंकुश तानाशाही कायम करने वाले तथाकथित मार्क्सवादी शासकों के वारे-न्यारे कर दिये वहीं दूसरी ओर एक बिल्कुल नये उदार तथा मुक्त समाजवाद की नींव पड़ी जिससे सोवियत गणतंत्रों को अपने परिसंघ से अलग होना संभव हो सका। अब यह बात साबित हो चुकी है कि सोवियत प्रचार माध्यमों द्वारा फैलाया जाने वाला सिद्धांत दिखावा था कि सोवियत परिसंघ में शामिल सभी गणतंत्रों को पूर्ण स्वायत्तता है और वे जब चाहें परिसंघ से अलग हो सकते हैं। लेकिन जब गणतंत्रों ने अलग होने की कोशिश की तो उनके साथ क्या सुलूक हुआ, सर्वजनीन है। श्री गोर्बाचेव को इस बात के लिए दाद देनी होगी कि माहौल के अनुकूल उन्होंने निर्णय लिये और वो सही में नोबेल शांति पुरस्कार पाने के पात्र हैं। श्री गोर्बाचेव ने सोवियत संघ ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय राजनीति को भी एक नया रंग दिया नेपाल का आन्दोलन उसी का असर है जिसने बांग्लादेश को भी अपनी लपेट में ले लिया और सैनिक तानाशाह जनरल हुसैन मुहम्मद इरशाद को अपने पद से हटना पड़ा (सात दिसम्बर) जो सेनाध्यक्ष (जनरल नुरुद्दीन) कल तक राष्ट्रपति के सहयोगी थे वही अब उन्हें नजरबंद करके उन पर मुकदमा चला रहे हैं। श्री इरशाद चार साल से जनभावनाओं को कुचलने की असफल कोशिश कर रहे थे।

श्रीमती मारग्रेट थैचर का ब्रिटेन के प्रधानमंत्री पद से हटना और उन्हीं की पार्टी के जॉन मेजर का बनना इस वर्ष की बड़ी रोचक घटना है। नेता पद के चुनाव के प्रथम दौर में ही अपने तीन प्रतिद्वंद्वियों के मुकाबले कम वोट मिलने पर श्रीमती थैचर ने इस्तीफा दे दिया और जॉन मेजर ने सन् १८९४ के बाद से सबसे युवा प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली (२७ नवम्बर)। यह बात रोचक इस मामले में है कि मेजर मंत्रिमंडल के सारे सदस्य श्रीमती थैचर की ही नीतियों के समर्थक है, सिर्फ थैचर नहीं है। देश में श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह का नाटकीय ढंग से हटना और श्री चन्द्रशेखर का प्रधानमंत्री बनना भी एक बड़ी घटना है जिसका सबसे मजेदार पहलू यह है कि केन्द्रीय मंत्रिमंडल सरकार में रहकर भी अल्पमत में है।

तीन अगस्त को इराकी राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन ने कुवैत पर कब्जा कर लिया। अमरीकी पिछलग्गू कुवैत के अमीर अलसबह के साथ यह वैसा ही सुलूक है जो १९३८ में जर्मन तानाशाह हिटलर ने चेकोस्लोवाकिया के राष्ट्रपति डा. बेन्स के साथ किया था।

सद्दाम हुसैन की यह जुर्रत खुली चुनौती है और अमरीका जैसी महाशक्ति भी आगा-पीछा सोचने को विवश है। जॉर्ज बुश द्वारा चारों ओर से इराक के खिलाफ सैनिक जमावड़े और सैनिक कार्रवाई करने की सुरक्षा परिषद से स्वीकृति मिल जाने के बावजूद ऐसा नहीं लगता कि श्री हुसैन पर कोई असर पड़ा है। वैसे जॉर्ज बुश ने अपनी ओर से १५ जनवरी तक का अल्टीमेटम दे दिया है। अमरीका जैसे देश को आंख दिखाना अपने आप में एक बड़ी घटना है।

शशिधर खां

14.1.1991 (हिन्दुस्तान) पटना